सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय

जन्म : 7 मार्च 1911 ।
निधन : 4 अप्रैल 1987 ।
जन्म-स्थान : कसेया, कुशीनगर, उत्तर प्रदेश ।
मूल निवास : कर्तारपुर, पंजाब ।
माता-पिता : व्यंती देवी एवं डॉ० हीरानंद शास्त्री (प्रख्यात पुरातत्त्ववेत्ता)
शिक्षा : प्रारंभिक चार साल लखनऊ में घर पर । मैट्रिक 1925 में, पंजाब विश्वविद्यालय से । इंटर 1927 में मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज से । बी० एससी० 1929 फोरमन कॉलेज, लाहौर, पंजाब (वर्तमान पाकिस्तान); एम० ए० (अंग्रेजी, पूर्वार्ध), लाहौर से । क्रांतिकारी आंदोलन में गिरफ्तार हो जाने से आगे पढ़ाई रुक गई ।
भाषा-ज्ञान : संस्कृत, अंग्रेजी, हिंदी के अतिरिक्त फारसी, तमिल आदि अनेक भाषाओं का ज्ञान था ।
व्यक्तित्व एवं स्वभाव : सुंदर, लंबा, गठीला शरीर । सुरुचि, सुव्यवस्था एवं अनुशासनप्रियता । एकांतप्रिय अंतर्मुखी स्वभाव । गंभीर एवं चिंतनशील, मितभाषी । अपने मौन एवं मितभाषण के लिए प्रसिद्ध । पिताजी का तबादला होते रहने के कारण लखनऊ, कश्मीर, लाहौर, पटना, मद्रास आदि स्थानों पर उनके साथ रहने और परिभ्रमण का संस्कार बचपन में ही मिला ।
अभिरुचि : बागवानी, पर्यटन, अध्ययन आदि के अलावा दर्जनों प्रकार के पेशेवर कार्यों में दक्षता । फोटोग्राफी, हस्तकला, शिल्प आदि में प्रवीणता । यूरोप, एशिया, अमेरिका सहित कई देशों की साहित्यिक यात्राएँ ।
सम्मान एवं पुरस्कार : साहित्य अकादमी, भारतीय ज्ञानपीठ, सुगा (युगोस्लाविया) का अंतरराष्ट्रीय स्वर्णमाल आदि पुरस्कार । देश-विदेश के अनेक विश्वविद्यालयों में 'विजिटिंग प्रोफेसर' के रूप में आमंत्रित ।
पत्रकारिता : सैनिक (आगरा), विशाल भारत (कोलकाता), प्रतीक (प्रयाग), दिनमान (दिल्ली), नया प्रतीक (दिल्ली), नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली); थॉट, वाक्, एवरीमैंस (अंग्रेजी में संपादन) ।
कृतियाँ : दस वर्ष की अवस्था में कविता लिखनी शुरू की । लेखन हिंदी-अंग्रेजी दोनों भाषाओं में । बचपन में खेलने के लिए 'इंद्रसभा' नामक नाटक लिखा । घर में एक हस्तलिखित पत्रिका 'आनंदबंधु' निकालते थे । 1924-25 में अंग्रेजी में एक उपन्यास लिखा था । 1924 में पहली कहानी इलाहाबाद की स्काउट पत्रिका 'सेवा' में प्रकाशित, 1930 के बाद नियमित लेखन । विपथगा, जयदोल, ये तेरे प्रतिरूप, छोड़ा हुआ रास्ता, लौटती पगडंडियाँ आदि (कहानी संकलन) । शेखर : एक जीवनी (प्रथम भाग 1941, द्वितीय भाग 1944), नदी के द्वीप (1952), अपने-अपने अजनबी (1961) – सभी उपन्यास । उत्तर प्रियदर्शी (1967) – नाटक । भग्नदूत, चिंता, इत्यलम्, हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, आँगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, सदानीरा, ऐसा कोई घर आपने देखा है आदि (कविता संकलन) । अरे यायावर रहेगा याद (1953), एक बूँद सहसा उछली (1961) – यात्रा साहित्य । त्रिशंकु, आत्मनेपद, आलवाल, अद्यतन, भवंती, अंतरा, शाश्वती, संवत्सर आदि (सभी निबंध) । तार सप्तक (1943), दूसरा सप्तक (1951), तीसरा सप्तक (1959), चौथा सप्तक (1978), पुष्करिणी, रूपांबरा, नेहरू अभिनंदन ग्रंथ आदि (सभी संपादित ग्रंथ) ।
शरतचंद्र के श्रीकांत, जैनेंद्र कुमार के त्यागपत्र तथा अपने उपन्यास अपने-अपने अजनबी सहित अनेक कृतियों का अंग्रेजी अनुवाद । रवींद्रनाथ ठाकुर के गोरा का हिंदी अनुवाद ।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय हिंदी के आधुनिक साहित्य में एक प्रमुख प्रतिभा थे । वे आधुनिक हिंदी साहित्य के एक प्रमुख कवि, कथाकार, विचारक एवं पत्रकार थे । साहित्य की अनेक विधाओं–यात्रा साहित्य, आलोचना, डायरी आदि में भी उनका अवदान महत्त्वपूर्ण है । उन्होंने विशाल साहित्य की रचना की है जिसमें वस्तु, भाव, भाषा, शिल्प आदि के धरातल पर प्रयोगों और नवाचारों की बहुलता है । साहित्य में लेखन के अतिरिक्त संपादन, निर्देशन, अभिप्रेरण, परिसंवाद, भाषण आदि के द्वारा भी उन्होंने अपनी सर्जनात्मकता को विस्तार दिया है । उनमें युग का प्रतिनिधित्व करनेवाली, सांगठनिक क्षमताओं से युक्त नेतृत्वकारी प्रतिभा और रचनात्मक कर्मठता थी । अज्ञेय का जीवन और साहित्य, जो घनिष्ठ रूप से परस्पर संपृक्त हैं, विशेष व्यक्तित्व से संपन्न एवं वैविध्यपूर्ण हैं । स्वाधीनता आंदोलन में उग्र और विद्रोही विचारधारा वाले एक क्रांतिकारी के रूप में उनकी भूमिका रही । कारावास और जेल यातनाएँ भी उन्हें सहनी पड़ीं । द्वितीय महायुद्ध के दौरान उन्होंने सेना में नौकरी की थी । वे आजीवन सैलानी रहे, रोमांचक यात्राएँ करना उनका स्वभाव और शौक था । हिंदी में शायद ही ऐसा कोई लेखक–कलाकार हो जिसकी अज्ञेय की तरह परस्पर असंबद्ध बीसों तरह के कार्यों में पेशेवर दक्षता हो । प्रतिभा, रुचि और शौक की अपरिमित विविधता के कारण उनके व्यक्तित्व में विशेष प्रकार का विस्तार, गहराई, विविधता और एकान्विति संघटित हुई और वे विलक्षण लेखक बन गए ।

कथा साहित्य में प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद के बाद आए महत्त्वपूर्ण क्रांतिकारी परिवर्तन में अज्ञेय की भूमिका निर्णायक रही है । कहानी को महज किस्सा, आख्यान और इतिवृत्त के धरातल से ऊपर उठाकर एक कसे हुए, अंतर्गुंफित कलात्मक रूप के तौर पर उभारने वालों में अज्ञेय अग्रणी रहे हैं । हिंदी कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिक गहराई लाने का श्रेय जैनेंद्र कुमार और अज्ञेय को दिया जाता है । इसके साथ ही बौद्धिकता, नैतिक-वैचारिक सजगता और कलात्मकता भी अज्ञेय ने हिंदी कथा में जोड़ी । अज्ञेय ने हिंदी कहानी के भावी विकास का प्रारूप अपनी कहानियों द्वारा प्रस्तुत किया । बिना अज्ञेय के 'नई कहानी' की कल्पना नहीं की जा सकती ।

अज्ञेय के द्वारा 'गैंग्रीन' शीर्षक से 1934 में लिखी गई कहानी यहाँ प्रस्तुत है । बाद में इसका शीर्षक लेखक के द्वारा 'रोज' कर दिया गया । यह प्रेमचंद के बाद की श्रेष्ठ हिंदी कहानियों में परिगणित होती है । वातावरण, परिस्थिति और उसके प्रभाव में ढलते हुए एक गृहिणी के चरित्र का मनोवैज्ञानिक उद्‌घाटन अत्यंत कलात्मक रीति से लेखक यहाँ प्रस्तुत करता है । डॉक्टर पति के काम पर चले जाने के बाद का सारा समय मालती को घर में एकाकी काटना होता है । उसका दुर्बल, बीमार और चिड़चिड़ा पुत्र हमेशा सोता रहता है या रोता रहता है । मालती उसकी देखभाल करती हुई सुबह से रात ग्यारह बजे तक घर के कार्यों में अपने को व्यस्त रखती है । उसका जीवन ऊब और उदासी के बीच यंत्रवत चल रहा है । किसी तरह के मनोविनोद, उल्लास उसके जीवन में नहीं रह गए हैं । जैसे वह अपने जीवन का भार ढोने में ही घुल रही हो । प्रसंगवश मध्यवर्गीय भारतीय समाज में घरेलू स्त्री के जीवन और मनोदशा पर लेखक अपनी सहानुभूतिपूर्ण मानवीय दृष्टि केंद्रित करता है । कहानी के गर्भ से अनेक सामाजिक प्रश्न विचारोत्तेजक रूप में पैदा होते हैं ।

◆ ◆ ◆

“ रोज अज्ञेय की सर्वाधिक चर्चित कहानी है क्योंकि इसमें 'संबंधों' की वास्तविकता को एकांत वैयक्तिक अनुभूतियों से अलग ले जाकर सामाजिक संदर्भ में देखा गया है । मध्यवर्ग की पारिवारिक एकरसता को जितनी मार्मिकता से कहानी व्यक्त कर सकी है वह उस युग की कहानियों में विरल है । ”

–विजय मोहन सिंह

रोज

दोपहर में उस सूने आँगन में पैर रखते ही मुझे ऐसा जान पड़ा, मानो उस पर किसी शाप की छाया मँडरा रही हो, उसके वातावरण में कुछ ऐसा अकथ्य, अस्पृश्य, किंतु फिर भी बोझल और प्रकंपमय घना सा सन्नाटा फैल रहा था .....

मेरी आहट सुनते ही मालती बाहर निकली । मुझे देखकर, पहचानकर उसकी मुरझाई हुई मुख-मुद्रा तनिक से मीठे विस्मय से जागी सी और फिर पूर्ववत हो गई । उसने कहा, ''आ जाओ ।'' और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए भीतर की ओर चली । मैं भी उसके पीछे हो लिया ।

भीतर पहुँचकर मैंने पूछा, ''वे यहाँ नहीं हैं ?''

''अभी आए नहीं, दफ्तर में हैं । थोड़ी देर में आ जाएँगे । कोई डेढ़-दो बजे आया करते हैं ।''

''कबके गए हुए हैं ?''

''सवेरे उठते ही चले जाते हैं ।''

मैं 'हूँ' कहकर पूछने को हुआ, 'और तुम इतनी देर क्या करती हो ?' पर फिर सोचा, आते ही एकाएक प्रश्न ठीक नहीं है । मैं कमरे के चारों ओर देखने लगा ।

मालती एक पंखा उठा लाई और मुझे हवा करने लगी । मैंने आपत्ति करते हुए कहा, ''नहीं, मुझे नहीं चाहिए ।'' पर वह नहीं मानी, बोली, ''वाह ! चाहिए कैसे नहीं ? इतनी धूप में तो आए हो ! यहाँ तो.......''

मैंने कहा, ''अच्छा, लाओ मुझे दे दो ।''

वह शायद 'ना' करनेवाली थी, पर तभी दूसरे कमरे से शिशु के रोने की आवाज सुनकर उसने चुपचाप पंखा मुझे दे दिया और घुटने पर हाथ टेक कर एक थकी हुई 'हुँह' करके उठी और भीतर चली गई ।

मैं उसके जाते हुए, दुबले शरीर को देख कर सोचता रहा–यह क्या है ... यह कैसी छाया सी इस घर में छाई हुई है ?.....

मालती मेरी दूर के रिश्ते की बहन है, किंतु उसे सखी कहना ही उचित है, क्योंकि हमारा परस्पर संबंध सख्य का ही रहा है । हम बचपन में इकट्ठे खेले हैं, इकट्ठे लड़े और पिटे हैं, और हमारी पढ़ाई

भी बहुत सी इकट्ठे ही हुई थी । हमारे व्यवहार में सदा सख्य की स्वेच्छा और स्वच्छंदता रही है, वह कभी भ्रातृत्व के, या बड़े छोटेपन के बंधनों में नहीं घिरा....

मैं आज कोई चार वर्ष बाद उसे देखने आया हूँ । जब मैंने उसे इससे पूर्व देखा था, तब वह लड़की ही थी, अब वह विवाहिता है, एक बच्चे की माँ भी है । इससे कोई परिवर्तन उसमें आया होगा और यदि आया होगा तो क्या, यह मैंने अभी तक सोचा नहीं था, किंतु अब उसकी पीठ की ओर देखता हुआ मैं सोच रहा था, यह कैसी छाया इस घर पर छाई हुई है.... और विशेषतया मालती पर.....

मालती बच्चे को लेकर लौट आई और फिर मुझसे कुछ दूर नीचे बिछी हुई दरी पर बैठ गई । मैंने अपनी कुरसी घुमाकर कुछ उसकी ओर उन्मुख होकर पूछा, "इसका नाम क्या है ?"

मालती ने बच्चे की ओर देखते हुए उत्तर दिया, "नाम तो कोई निश्चित नहीं किया, वैसे टिटी कहते हैं ।"

मैंने उसे बुलाया, "टिटी, टिटी आ जा," पर वह अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से मेरी ओर देखता हुआ अपनी माँ से चिपट गया, और रुआँसा सा होकर कहने लगा, "उहुँ-उहुँ-उहुँ-ऊँ..."

मालती ने फिर उसकी ओर एक नजर देखा, और फिर आँगन की ओर देखने लगी...

काफी देर मौन रहा । थोड़ी देर तक तो वह मौन आकस्मिक ही था, जिसमें मैं प्रतीक्षा में था कि मालती कुछ पूछे, किंतु उसके बाद एकाएक मुझे ध्यान हुआ, मालती ने कोई बात ही नहीं की... यह भी नहीं पूछा कि मैं कैसा हूँ, कैसे आया हूँ.... चुप बैठी है, क्या विवाह के दो वर्ष में ही वह बीते दिन भूल गई ? या अब मुझे दूर–इस विशेष अंतर पर–रखना चाहती है ? क्योंकि वह निर्बाध स्वच्छंदता अब तो नहीं हो सकती.... पर फिर भी, ऐसा मौन, जैसा अजनबी से भी नहीं होना चाहिए.....

मैंने कुछ खिन्न सा होकर, दूसरी ओर देखते हुए कहा, "जान पड़ता है, तुम्हें मेरे आने से विशेष प्रसन्नता नहीं हुई–"

उसने एकाएक चौंककर कहा, "हूँ ?"

यह 'हूँ' प्रश्नसूचक था, किंतु इसलिए नहीं कि मालती ने मेरी बात सुनी नहीं थी, केवल विस्मय के कारण । इसलिए मैंने अपनी बात दुहराई नहीं, चुप बैठा रहा । मालती कुछ बोली ही नहीं, तब थोड़ी देर बाद मैंने उसकी ओर देखा । वह मेरी ओर देख रही थी, किंतु मेरे उधर उन्मुख होते ही उसने आँखें नीची कर लीं । फिर भी मैंने देखा, उन आँखों में विचित्र सा भाव था, मानो मालती के भीतर कहीं कुछ चेष्टा कर रहा हो, किसी बीती हुई बात को याद करने की, किसी बिखरे हुए वायुमंडल को पुनः जगाकर गतिमान करने की, किसी टूटे हुए व्यवहार-तंतु को पुनर्जीवित करने की, और चेष्टा में सफल न हो रहा हो...वैसे जैसे बहुत देर से प्रयोग में न लाए हुए अंग को व्यक्ति एकाएक उठाने लगे और पाए कि वह उठता ही नहीं है, चिर-विस्मृति में मानो मर गया है, उतने क्षीण बल से (यद्यपि वह सारा प्राप्य बल है) उठ नहीं सकता....मुझे ऐसा जान पड़ा, मानो किसी जीवित प्राणी के गले में किसी मृत जंतु का तौक डाल दिया गया हो, वह उसे उतारकर फेंकना चाहे, पर उतार न पाए.....

तभी किसी ने किवाड़ खटखटाए । मैंने मालती की ओर देखा, पर वह हिली नहीं । जब किवाड़

दूसरी बार खटखटाए गए, तब शिशु को अलग करके उठी और किवाड़ खोलने लगी ।

वे, यानी मालती के पति आए । मैंने उन्हें पहली बार देखा था, यद्यपि फोटो से उन्हें पहचानता था । परिचय हुआ । मालती खाना तैयार करने आँगन में चली गई, और हम दोनों भीतर बैठकर बातचीत करने लगे, उनकी नौकरी के बारे में, उनके जीवन के बारे में, उस स्थान के बारे में, और ऐसे अन्य विषयों के बारे में जो पहले परिचय पर उठा करते हैं, एक तरह का स्वरक्षात्मक कवच बनकर......

मालती के पति का नाम है महेश्वर । वह एक पहाड़ी गाँव में सरकारी डिस्पेंसरी के डॉक्टर हैं, उसी हैसियत से इन क्वार्टरों में रहते हैं । प्रात:काल सात बजे डिस्पेंसरी चले जाते हैं, और डेढ़ या दो बजे लौटते हैं, उसके बाद दोपहर भर छुट्टी रहती है, केवल शाम को एक-दो घंटे फिर चक्कर लगाने के लिए जाते हैं, डिस्पेंसरी के साथ छोटे से अस्पताल में रोगियों को देखने और अन्य जरूरी हिदायतें करने....उनका जीवन भी बिलकुल एक निर्दिष्ट ढर्रे पर चलता है, नित्य वही काम, उसी प्रकार के मरीज, वही हिदायतें, वही नुस्खे, वही दवाइयाँ । वह स्वयं उकताए हुए हैं और इसलिए और साथ ही इस भयंकर गरमी के कारण वह अपने फुरसत के समय में भी सुस्त ही रहते हैं....

मालती हम दोनों के लिए खाना ले आई । मैंने पूछा, "तुम नहीं खाओगी ? या खा चुकीं ?"

महेश्वर बोले, कुछ हँसकर, "वह पीछे खाया करती है...."

पति ढाई बजे खाना खाने आते हैं, इसलिए पत्नी तीन बजे तक भूखी बैठी रहेगी !

महेश्वर खाना आरंभ करते हुए मेरी ओर देखकर बोले, "आपको तो खाने का मजा ही क्या आएगा, ऐसे बेवक्त खा रहे हैं ?"

मैंने उत्तर दिया, "वाह ! देर से खाने पर तो और भी अच्छा लगता है, भूख बढ़ी हुई होती है, पर शायद मालती बहन को कष्ट होगा ।"

मालती टोककर बोली, 'ऊँहूँ, मेरे लिए तो यह नई बात नहीं है.....रोज ही ऐसा होता है......"

मालती बच्चे को गोद में लिए हुए थी । बच्चा रो रहा था, पर उसकी ओर कोई भी ध्यान नहीं दे रहा था ।

मैंने कहा, "यह रोता क्यों है ?"

मालती बोली, "हो ही गया है चिड़चिड़ा सा, हमेशा ही ऐसा रहता है ।" फिर बच्चे को डाँट कर कहा, "चुप कर ।" जिससे वह और भी रोने लगा । मालती ने भूमि पर बैठा दिया और बोली, 'अच्छा ले, रो ले ।" और रोटी लेने आँगन की ओर चली गई ।

जब हमने भोजन समाप्त किया तब तीन बजने वाले थे, महेश्वर ने बताया कि उन्हें आज जल्दी अस्पताल जाना है, वहाँ एक-दो चिंताजनक केस आए हुए हैं, जिनका ऑपरेशन करना पड़ेगा......दो की शायद टाँग काटनी पड़े, गैंग्रीन हो गया है......थोड़ी देर में वह चले गए । मालती किवाड़ बंद कर आई और मेरे पास बैठने ही लगी थी कि मैंने कहा, "अब खाना तो खा लो, मैं उतनी देर टिटी से खेलता हूँ ।"

वह बोली, "खा लूँगी, मेरे खाने की कौन बात है," किंतु चली गई । मैं टिटी को हाथ में लेकर

झुलाने लगा, जिससे वह कुछ देर के लिए शांत हो गया ।

दूर.....शायद अस्पताल में ही, तीन खड़के । एकाएक मैं चौंका, मैंने सुना, मालती वहीं आँगन में बैठी अपने आप ही एक लंबी सी थकी हुई साँस के साथ कह रही है, "तीन बज गए...." मानो बड़ी तपस्या के बाद कोई कार्य संपन्न हो गया हो ।

थोड़ी ही देर में मालती फिर आ गई, मैंने पूछा, "तुम्हारे लिए कुछ बचा भी था ? सब कुछ तो....."

"बहुत था ।"

"हाँ, बहुत था, भाजी तो सारी मैं ही खा गया था, वहाँ बचा कुछ होगा नहीं, यों ही रोब तो न जमाओ कि बहुत था ।" मैंने हँस कर कहा ।

मालती मानो किसी और विषय की बात कहती हुई बोली, "यहाँ सब्जी-वब्जी तो कुछ होती ही नहीं; कोई आता-जाता है तो नीचे से मँगा लेते हैं, मुझे आए पंद्रह दिन हुए हैं, जो सब्जी साथ लाए थे वही अभी बरती जा रही है...."

मैंने पूछा, "नौकर कोई नहीं है ?"

"कोई ठीक मिला नहीं, शायद दो-एक दिन में हो जाए ।"

"बरतन भी तुम्हीं माँजती हो ?"

"और कौन ?" कह कर मालती क्षण भर आँगन में जाकर लौट आई ।

मैंने पूछा, "कहाँ गई थी ?"

"आज पानी ही नहीं है, बरतन कैसे मँजेंगे ?

"क्यों पानी को क्या हुआ ?"

"रोज ही होता है....कभी वक्त पर तो आता नहीं, आज शाम को सात बजे आएगा, तब बरतन मँजेंगे ।"

"चलो, तुम्हें सात बजे तक तो छुट्टी हुई," कहते हुए मैं मन ही मन सोचने लगा, अब इसे रात के ग्यारह बजे तक काम करना पड़ेगा, छुट्टी क्या खाक हुई ?

यही उसने कहा । मेरे पास कोई उत्तर नहीं था, पर मेरी सहायता टिटी ने की, एकाएक फिर रोने लगा और मालती के पास जाने की चेष्टा करने लगा । मैंने उसे दे दिया ।

थोड़ी देर फिर मौन रहा, मैंने जेब से अपनी नोटबुक निकाली और पिछले दिनों के लिखे हुए नोट देखने लगा, तब मालती को याद आया कि उसने मेरे आने का कारण पूछा नहीं, और बोली, "यहाँ आए कैसे ?"

मैंने कहा, "अच्छा, अब याद आया ? तुमसे मिलने आया था, और क्या करने ?"

"तो दो-एक दिन रहोगे न ?"

"नहीं कल चला जाऊँगा ।"

मालती कुछ नहीं बोली, कुछ खिन्न सी हो गई । मैं फिर नोटबुक की तरफ देखने लगा ।

थोड़ी देर बाद मुझे ध्यान हुआ, मैं आया तो हूँ मालती से मिलने, किंतु यहाँ वह बात करने को बैठी है और मैं पढ़ रहा हूँ, पर बात भी क्या की जाए ? मुझे ऐसा लग रहा था कि इस घर पर जो छाया घिरी हुई है, वह अज्ञात रहकर भी मानो मुझे भी वश में कर रही है, मैं भी वैसा ही नीरस निर्जीव सा हो रहा हूँ, जैसे–हाँ, जैसे.......यह घर, जैसे मालती ।

मैंने पूछा, "तुम कुछ पढ़ती-लिखती नहीं ?" मैं चारों ओर देखने लगा कि कहीं किताबें दीख पड़ें ।

"यहाँ !" कहकर मालती थोड़ा सा हँस दी । वह हँसी कह रही थी, 'यहाँ पढ़ने को है क्या ?"

मैंने कहा, "अच्छा, मैं वापस जाकर जरूर कुछ पुस्तकें भेजूँगा..." और वार्तालाप फिर समाप्त हो गया...

थोड़ी देर बाद मालती ने फिर पूछा, "आए कैसे हो, लारी में ?"

"पैदल ।"

"इतनी दूर ? बड़ी हिम्मत की ।"

"आखिर तुमसे मिलने आया हूँ ।"

"ऐसे ही आए हो ?"

"नहीं, कुली पीछे आ रहा है, सामान लेकर । मैंने सोचा, बिस्तरा ले चलूँ ।"

"अच्छा किया, यहाँ तो बस....." कहकर मालती चुप रह गई, फिर बोली, "तब तुम थके होगे, लेट जाओ ।"

"नहीं बिलकुल नहीं थका ।"

"रहने भी दो, थके नहीं, भला थके हैं ?"

"और तुम क्या करोगी ?"

"मैं बरतन माँज रखती हूँ ?"

मैंने कहा, "वाह !" क्योंकि और कोई बात मुझे सूझी नहीं...

थोड़ी देर में मालती उठी और चली गई, टिटी को साथ लेकर । तब मैं भी लेट गया और छत की ओर देखने लगा...मेरे विचारों के साथ आँगन से आती हुई बरतनों के घिसने की खन-खन ध्वनि मिलकर एक विचित्र एकस्वर उत्पन्न करने लगी, जिसके कारण मेरे अंग धीरे-धीरे ढीले पड़ने लगे, मैं ऊँघने लगा....

एकाएक वह एकस्वर टूट गया–मौन हो गया । इससे मेरी तंद्रा भी टूटी, मैं उस मौन में सुनने लगा.....

चार खड़क रहे थे और इसी का पहला घंटा सुनकर मालती रुक गई थी....

वही तीन बजे वाली बात मैंने फिर देखी, अबकी बार और उग्र रूप में। मैंने सुना, मालती एक बिलकुल अनैच्छिक, अनुभूतिविहीन, नीरस, यंत्रवत्–वह भी थके हुए यंत्र के-से स्वर में कह रही है, "चार बज गए" मानो इस अनैच्छिक समय गिनने-गिनने में ही उसका मशीन तुल्य जीवन बीतता हो, वैसे ही, जैसे मोटर का स्पीडोमीटर यंत्रवत् फासला नापता जाता है, और यंत्रवत् विश्रांत स्वर में कहता है (किससे ?) कि मैंने अपने अमित शून्यपथ का इतना अंश तय कर लिया....न जाने कब, कैसे मुझे नींद आ गई !

तब छह कभी के बज चुके थे, जब किसी के आने की आहट से मेरी नींद खुली और मैंने देखा कि महेश्वर लौट आए हैं, और उनके साथ ही बिस्तर लिए हुए मेरा कुली। मैं मुँह धोने को पानी माँगने को ही था कि मुझे याद आया, पानी नहीं होगा। मैंने हाथों से मुँह पोंछते-पोंछते महेश्वर से पूछा, "आपने बड़ी देर की ?"

उन्होंने किंचित ग्लानि भरे स्वर में कहा, "हाँ, आज वह गैंग्रीन का ऑपरेशन करना ही पड़ा, एक कर आया हूँ, दूसरे को एंबुलेंस में बड़े अस्पताल भिजवा दिया है।"

मैंने पूछा, "गैंग्रीन कैसे हो गया ?"

"एक काँटा चुभा था, उसी से हो गया, बड़े लापरवाह लोग होते हैं यहाँ के...."

मैंने पूछा, "यहाँ आपको केस अच्छे मिल जाते हैं ? आय के लिहाज से नहीं, डॉक्टरी के अभ्यास के लिए ?"

बोले, "हाँ मिल ही जाते हैं, यही गैंग्रीन, हर दूसरे-चौथे दिन एक केस आ जाता है, नीचे बड़े अस्पतालों में भी...."

मालती आँगन से ही सुन रही थी, अब आ गई, बोली, "हाँ केस बनाते देर क्या लगती है ? काँटा चुभा था, इस पर टाँग काटनी पड़े, यह भी कोई डॉक्टरी है ? हर दूसरे दिन किसी की बाँह काट आते हैं, इसी का नाम है अच्छा अभ्यास !"

महेश्वर हँसे, बोले, "न काटें तो उसकी जान गँवाएँ ?"

"हाँ पहले तो दुनिया में काँटे ही नहीं होते होंगे ? आज तक तो सुना नहीं था कि काँटों के चुभने से मर जाते हैं...."

महेश्वर ने उत्तर नहीं दिया, मुस्करा दिए। मालती मेरी ओर देखकर बोली "ऐसे ही होते हैं डॉक्टर, सरकारी अस्पताल है न, क्या परवाह है। मैं तो रोज ऐसी बातें सुनती हूँ ! अब कोई मर-मुर जाए तो ख्याल ही नहीं होता। पहले तो रात-रात भर नींद नहीं आया करती थी।"

तभी आँगन में खुले हुए नल ने कहा - टिप्-टिप्-टिप्-टिप्-टिप्-टिप्......

मालती ने कहा, "पानी !" और उठ कर चली गई। खनखनाहट से हमने जाना, बरतन धोए जाने लगे हैं......

टिटी महेश्वर की टाँगों के सहारे खड़ा मेरी ओर देख रहा था, अब एकाएक उन्हें छोड़कर मालती

की ओर खिसकता हुआ चला । महेश्वर ने कहा, "उधर मत जा !" और उसे गोद में उठा लिया, वह मचलने लगा और चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगा ।

महेश्वर बोले, "अब रो-रो कर सो जाएगा, तभी घर में चैन होगी ।"

मैंने पूछा, "आप लोग भीतर ही सोते हैं ? गरमी तो बहुत होती है ?"

"होने को तो मच्छर भी बहुत होते हैं, पर यह लोहे के पलंग उठाकर बाहर कौन ले जाए ? अब के नीचे जाएँगे तो चारपाइयाँ ले आएँगे ।" फिर कुछ रुककर बोले, "आज तो बाहर ही सोएँगे । आपके आने का इतना लाभ ही होगा ।"

टिटी अभी तक रोता ही जा रहा था । महेश्वर ने उसे एक पलंग पर बैठा दिया, और पलंग बाहर खींचने लगे, मैंने कहा, "मैं मदद करता हूँ", और दूसरी ओर से पलंग उठाकर निकलवा दिए ।

अब हम तीनों–महेश्वर, टिटी और मैं–दो पलंगों पर बैठ गए और वार्तालाप के लिए उपयुक्त विषय न पाकर उस कमी को छुपाने के लिए टिटी से खेलने लगे । बाहर आकर वह कुछ चुप हो गया था, किंतु बीच-बीच में जैसे एकाएक कोई भूला हुआ कर्त्तव्य याद करके रो उठता था, और फिर एकदम चुप हो जाता था....और कभी-कभी हम हँस पड़ते थे, या महेश्वर उसके बारे में कुछ बात कह देते थे ।

मालती बरतन धो चुकी थी । जब वह उन्हें लेकर आँगन के एक ओर रसोई के छप्पर की ओर चली, तब महेश्वर ने कहा, 'थोड़े से आम लाया हूँ, वह भी धो लेना ।"

"कहाँ हैं ?"

"अँगीठी पर रखे हैं, कागज में लिपटे हुए ।"

मालती ने भीतर जाकर आम उठाए और अपने आँचल में डाल लिए । जिस कागज में वे लिपटे हुए थे, वह किसी पुराने अखबार का टुकड़ा था । मालती चलती-चलती संध्या के उस क्षीण प्रकाश में उसी को पढ़ती जा रही थी....वह नल के पास जाकर खड़ी उसे पढ़ती रही । जब दोनों ओर पढ़ चुकी, तब एक लंबी साँस लेकर उसे फेंककर आम धोने लगी ।

मुझे एकाएक याद आया.....बहुत दिनों की बात थी....जब हम अभी स्कूल में भरती हुए ही थे । जब हमारा सबसे बड़ा सुख, सबसे बड़ी विजय थी हाजिरी हो चुकने के बाद चोरी से क्लास से निकल भागना और स्कूल से कुछ दूरी पर आम के बगीचे में पेड़ों पर चढ़कर कच्ची अमियाँ तोड़-तोड़ खाना । मुझे याद आता....कभी जब मैं भाग आता और मालती नहीं आ पाती थी तब मैं भी खिन्न-मन लौट आया करता था ।

मालती कुछ नहीं पढ़ती थी, उसके माता-पिता तंग थे, एक दिन उसके पिता ने उसे एक पुस्तक लाकर दी और कहा कि इसके बीस पेज रोज पढ़ा करो, हफ्ते भर बाद मैं देखूँ कि इसे समाप्त कर चुकी हो, नहीं तो मार-मार कर चमड़ी उधेड़ दूँगा : मालती ने चुपचाप किताब ले ली, पर क्या उसने पढ़ी ? वह नित्य ही उसके दस पन्ने, बीस पेज, फाड़कर फेंक देती, अपने खेल में किसी भाँति फर्क न पड़ने देती । जब आठवें दिन उसके पिता ने पूछा, "किताब समाप्त कर ली ?" तो उत्तर दिया, "हाँ कर ली," पिता ने कहा, "लाओ मैं प्रश्न पूछूँगा," तो चुप खड़ी रही । पिता ने फिर कहा, तो उद्धत स्वर में बोली,

"किताब मैंने फाड़कर फेंक दी है, मैं नहीं पढ़ूँगी ।"

उसके बाद वह बहुत पिटी, पर वह अलग बात है । इस समय मैं यही सोच रहा था कि वही उद्धत और चंचल मालती आज कितनी सीधी हो गई है, कितनी शांत, और एक अखबार के टुकड़े को तरसती है...यह क्या, यह.....

तभी महेश्वर ने पूछा, "रोटी कब बनेगी ?"

"बस अभी बनाती हूँ ।"

पर अबकी बार जब मालती रसोई की ओर चली, तब टिटी की कर्त्तव्यभावना बहुत विस्तीर्ण हो गई, वह मालती की ओर हाथ बढ़ाकर रोने लगा और नहीं माना, मालती उसे गोद में लेकर चली गई, रसोई में बैठकर एक हाथ से उसे थपकने और दूसरे से कई एक छोटे-छोटे डिब्बे उठाकर अपने सामने रखने लगी.....

और हम दोनों चुपचाप रात्रि की, और भोजन की, और एक दूसरे से कुछ कहने की, और न जाने किस-किस न्यूनता की पूर्ति की प्रतीक्षा करने लगे ।

हम भोजन कर चुके थे और बिस्तरों पर लेट गए थे और टिटी सो गया था । मालती पलंग के एक ओर मोमजामा बिछाकर उसे उसपर लिटा गई थी । वह सो गया था, पर नींद में कभी-कभी चौंक उठता था । एक बार तो उठकर बैठ भी गया था, पर तुरंत ही लेट गया ।

मैंने महेश्वर से पूछा–"आप तो थके होंगे, सो जाइए ।"

वह बोले, "थके तो आप अधिक होंगे....अठारह मील पैदल चलकर आए हैं ।" किंतु उनके स्वर ने मानो जोड़ दिया..."थका तो मैं भी हूँ ।"

मैं चुप रहा, थोड़ी देर में किसी अपर संज्ञा ने मुझे बताया, वह ऊँघ रहे हैं । तब लगभग साढ़े दस बजे थे, मालती भोजन कर रही थी ।

मैं थोड़ी देर मालती की ओर देखता रहा, वह किसी विचार में–यद्यपि बहुत गहरे विचार में नहीं, लीन हुई धीरे-धीरे खाना खा रही थी, फिर मैं इधर-उधर खिसककर, पर आराम से होकर, आकाश की ओर देखने लगा ।

पूर्णिमा थी, आकाश अनभ्र था ।

मैंने देखा, उस सरकारी क्वार्टर की, दिन में अत्यंत शुष्क और नीरस लगने वाली स्लेट की छत भी चाँदनी में चमक रही है, अत्यंत शीतलता और स्निग्धता से छलक रही है, मानो चंद्रिका उसपर से बहती हुई आ रही हो, झर रही हो.....

मैंने देखा, पवन में चीड़ के वृक्ष...गरमी से सूखकर मटमैले हुए चीड़ के वृक्ष धीरे-धीरे गा रहे हों...कोई राग जो कोमल है, किंतु करुण नहीं, अशांतिमय है, किंतु उद्वेगमय नहीं....

मैंने देखा, प्रकाश से धुँधले नीले आकाश के पट पर जो चमगादड़ नीरव उड़ान से चक्कर काट रहे हैं, वे भी सुंदर दीखते हैं.....

मैंने देखा, ...दिन भर की तपन, अशांति, थकान, दाह, पहाड़ों में से भाप से उठकर वातावरण में खोए जा रहे हैं, जिसे ग्रहण करने के लिए पर्वत-शिशुओं ने अपनी चीड़ वृक्षरूपी भुजाएँ आकाश की ओर बढ़ा रखी हैं.....

पर यह सब मैंने ही देखा, अकेले मैंने....महेश्वर ऊँघ रहे थे और मालती उस समय भोजन से निवृत्त होकर दही जमाने के लिए मिट्टी का बर्तन गरम पानी से धो रही थी, और कह रही थी.... ''अभी छुट्टी हुई जाती है ।'' मेरे कहने पर ही कि ''ग्यारह बजने वाले हैं,'' धीरे से सिर हिलाकर बता रही थी कि रोज ही इतने बज जाते हैं....मालती ने वह सब कुछ नहीं देखा, मालती का जीवन अपनी रोज की नियत गति से बहा जा रहा था और एक चंद्रमा की चँद्रिका के लिए, एक संसार के लिए, रुकने को तैयार नहीं था ।

चाँदनी में शिशु कैसा लगता है, इस अलस जिज्ञासा से मैंने टिटी की ओर देखा और वह एकाएक मानो किसी शैशवोचित वामता से भर उठा और खिसककर पलंग से नीचे गिर पड़ा और चिल्ला-चिल्ला कर रोने लगा । महेश्वर ने चौंक कर कहा.... ''क्या हुआ ?'' मैं झपटकर उसे उठाने दौड़ा, मालती रसोई से बाहर निकल आई, मैंने उस 'खट्' शब्द को याद करके धीरे से करुणा भरे स्वर में कहा, ''चोट बहुत लग गई है बेचारे को ।''

यह सब मानो एक ही क्षण में, एक ही क्रिया की गति में हो गया ।

मालती ने रोते हुए शिशु को मुझसे लेने के लिए हाथ बढ़ाते हुए कहा, ''इसके चोटें लगती ही रहती हैं, रोज ही गिर पड़ता है ।''

एक छोटे क्षण भर के लिए मैं स्तब्ध हो गया, फिर एकाएक मेरे मन ने, मेरे समूचे अस्तित्व ने विद्रोह के स्वर में कहा–मेरे मन के भीतर ही, बाहर एक शब्द भी नहीं निकला–''माँ, युवती माँ, यह तुम्हारे हृदय को क्या हो गया है, जो तुम अपने एकमात्र बच्चे के गिरने पर ऐसी बात कह सकती हो–और यह अभी, जब तुम्हारा सारा जीवन तुम्हारे आगे है !''

और तब एकाएक मैंने जाना कि वह भावना मिथ्या नहीं है, मैंने देखा कि सचमुच उस कुटुंब में कोई गहरी भयंकर छाया घर कर गई है, उनके जीवन के इस पहले ही यौवन में घुन की तरह लग गई है, उसका इतना अभिन्न अंग हो गई है कि वे उसे पहचानते ही नहीं, उसी की परिधि में घिरे हुए चले जा रहे हैं । इतना ही नहीं, मैंने उस छाया को देख भी लिया...

इतनी देर में, पूर्ववत शांति हो गई थी । महेश्वर फिर लेटकर ऊँघ रहे थे । टिटी मालती के लेटे हुए शरीर से चिपक कर चुप हो गया था, यद्यपि कभी एक-आध सिसकी उसके छोटे से शरीर को हिला देती थी । मैं भी अनुभव करने लगा था कि बिस्तर अच्छा सा लग रहा है । मालती चुपचाप आकाश में देख रही थी, किंतु क्या चंद्रिका को या तारों को ?

तभी ग्यारह का घंटा बजा, मैंने अपनी भारी हो रही पलकें उठाकर अकस्मात् किसी अस्पष्ट प्रतीक्षा में मालती की ओर देखा । ग्यारह के पहले घंटे की खड़कन के साथ ही मालती की छाती एकाएक फफोले की भाँति उठी और धीरे-धीरे बैठने लगी, और घंटा-ध्वनि के कंपन के साथ ही मूक हो जानेवाली आवाज में उसने कहा, ''ग्यारह बज गए.....''

❑❑❑

अभ्यास

पाठ के साथ

1. मालती के घर का वातावरण आपको कैसा लगा ? अपने शब्दों में लिखिए ।
2. 'दोपहर में उस सूने आँगन में पैर रखते ही मुझे ऐसा जान पड़ा, मानो उस पर किसी शाम की छाया मँडरा रही हो', यह कैसी शाम की छाया है ? वर्णन कीजिए ।
3. लेखक और मालती के संबंध का परिचय पाठ के आधार पर दें ।
4. मालती के पति महेश्वर की कैसी छवि आपके मन में बनती है, कहानी में महेश्वर की उपस्थिति क्या अर्थ रखती है ? अपने विचार दें ।
5. गैंग्रीन क्या है ?
6. कहानी से उन वाक्यों को चुनें जिनमें 'रोज' शब्द का प्रयोग हुआ है ।
7. आशय स्पष्ट करें :-
   'मुझे ऐसा लग रहा था कि इस घर पर जो छाया घिरी हुई है, वह अज्ञात रहकर भी मानो मुझे भी वश में कर रही है, मैं भी वैसा ही नीरस निर्जीव सा हो रहा हूँ, जैसे–हाँ, जैसे.....यह घर, जैसे मालती ।
8. 'तीन बज गए', 'चार बज गए', 'ग्यारह बज गए'; कहानी में घंटे के इन खड़कों के साथ-साथ मालती की उपस्थिति है । घंटा बजने का मालती से क्या संबंध है ?
9. अभिप्राय स्पष्ट करें :-
   (क) मैंने देखा, पवन में चीड़ के वृक्ष ..... गर्मी से सूखकर मटमैले हुए चीड़ के वृक्ष धीरे-धीरे गा रहे हों. ...कोई राग जो कोमल है, किंतु करुण नहीं अशांतिमय है, किंतु उद्वेगमय नहीं....
   (ख) इस समय मैं यही सोच रहा था कि वही उद्धत और चंचल मालती आज कितनी सीधी हो गई है, कितनी शांत, और एक अखबार के टुकड़े को तरसती है.....यह क्या, यह.....
10. कहानी के आधार पर मालती के चरित्र के बारे में अपने शब्दों में लिखिए ।
11. बच्चे से जुड़े प्रसंगों पर ध्यान देते हुए उसके बारे में अपने शब्दों में लिखिए ।

पाठ के आस-पास

1. यह कहानी गैंग्रीन शीर्षक से भी प्रसिद्ध है, दोनों शीर्षकों में कौन सा शीर्षक आपको अधिक सार्थक लगता है और क्यों ?
2. अज्ञेय ने हिंदी कहानी के कथ्य और स्वरूप में ऐतिहासिक परिवर्तन लाए । एक कहानीकार के रूप में उनके महत्त्व पर अपने शिक्षक से जानकारी प्राप्त करें ।
3. शेखर : एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी अज्ञेय के उपन्यास हैं; इनकी कथावस्तु क्या है, इसे मालूम करने का प्रयास करें ।
4. मालती बिलकुल बदली हुई मालूम पड़ती है, वे क्या कारण होंगे, जिन्होंने मालती को बदल दिया ? आप क्या सोचते हैं ? सोचिए और लिखिए ।

5. यह कहानी उत्तम पुरुष शैली में लिखी गई है, तिरिछ भी ऐसी ही कहानी है । दिगंत (भाग - 1) में संकलित 'भोगे हुए दिन' भी ऐसी ही कहानी थी । आप इसी शैली में लिखी गई तीन अन्य कहानियों को संकलित करें और उन्हें पढ़ें ।

6. आप अपने आस-पड़ोस के घरों को याद करें । क्या ऐसा कोई घर और ऐसी कोई स्त्री दिखती है जिसकी तुलना मालती और उसके घर से की जा सके ? अपना अनुभव लिखिए और उस पर मित्रों के साथ चर्चा कीजिए ।

भाषा की बात

1. उद्वेगमय, शांतिमय शब्दों में 'मय' प्रत्यय लगा हुआ है । 'मय' प्रत्यय से पाँच अन्य शब्द बनाएँ ।
2. दिए गए वाक्यों से कारक चिह्न को रेखांकित करें, और वह किस कारक का चिह्न है, यह भी बताएँ ।
   (क) थोड़ी देर में आ जाएँगे ।
   (ख) मैं कमरे के चारों तरफ देखने लगा ।
   (ग) हम बचपन से इकट्ठे खेले हैं ।
   (घ) तभी किसी ने किवाड़ खटखटाए ।
   (ङ) शाम को एक-दो घंटे फिर चक्कर लगाने के लिए जाते हैं ।
   (च) एक छोटे क्षण भर के लिए मैं स्तब्ध हो गया ।
3. उसने कहा, "आ जाओ ।" यहाँ "आ जाओ" संयुक्त क्रिया है, पाठ से ऐसे पाँच वाक्य चुनें जिनमें संयुक्त क्रिया का प्रयोग हुआ हो ।
4. आपने दिगंत (भाग - 1) में प्रेमचंद की कहानी 'पूस की रात' पढ़ी थी, 'पूस की रात' की भाषा और शिल्प को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत कहानी की भाषा और शिल्प पर विचार कीजिए । दोनों कहानीकारों में इस आधार पर भिन्नता के कुछ बिंदुओं को पहचानिए और उसे कक्षा में प्रस्तुत कीजिए ।
5. नीचे दिए गए वाक्यों से अव्यय चुनें -
   (क) अब के नीचे जाएँगे तो चारपाइयाँ ले आएँगे ।
   (ख) एक बार तो उठकर बैठ भी गया था, पर तुरंत ही लेट गया ।
   (ग) टिटी मालती के लेटे हुए शरीर से चिपट कर चुप हो गया था, यद्यपि कभी एक-आध सिसकी उसके छोटे से शरीर को हिला देती थी ।

शब्द निधि

अकथ्य	:	जिसे कहा न जा सके	विस्मृति	:	भूलना, विस्मरण
अस्पृश्य	:	न छूने योग्य	यंत्रवत	:	मशीन की तरह
प्रकंपमय	:	काँपता हुआ	विस्तीर्ण	:	चौड़ा, फैला हुआ
विस्मय	:	अचरज	अनभ्र	:	बिना बादल का
पूर्ववत	:	पहले की तरह	चंद्रिका	:	चाँदनी
भ्रातृत्व	:	भाई-भाई का रिश्ता	मूक	:	बेआवाज, शांत
स्वेच्छा	:	अपनी इच्छा	अपर संज्ञा	:	लक्षण (लक्षणों से पता चला)
स्वच्छंदता	:	अपने मन के अनुसार	तौक	:	भार, हँसुली
उन्मुख	:	किसी चीज की ओर झुका हुआ	वामता	:	विपरीतता